

दयानन्द सरस्वती और नवजागरण : एक अध्ययन



डॉ० कुमारी रेशिम जया
एम.ए., पीएच.डी.,(इतिहास)
बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर (बिहार)

उत्तर भारत में धार्मिक और सामाजिक सुधार का सबसे प्रभावशाली आंदोलन दयानन्द सरस्वती ने शुरू किया। इनका जन्म 1824 ई0 में गुजरात के एक धनी ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बाल्यकाल से ही सामाजिक कुरीतियों तथा धार्मिक आड़म्बरों से उन्हें घृणा थी और प्राचीन भारत के धर्म और संस्कृति में उनकी बड़ी श्रद्धा थी। यद्यपि उन्हें अंग्रेजी की शिक्षा नहीं मिल सकी, फिर भी वे संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे। मथुरा में स्वामी विरजानन्द के तत्त्वाधान में उन्होंने 'अष्टाधायी' और 'वेदान्तसूत्र' का अध्ययन किया। उनका दृढ़ विश्वास था कि वैदिक धर्म सभ्यता तथा संस्कृति संसार में सर्वश्रेष्ठ है और विशुद्ध रूप से उनका पुनरुत्थान करने से ही भारत का कल्याण हो सकता है। अतः उन्होंने वेदों की ओर लौटने का संदेश दिया। राजा राम मोहन राय की भाँति स्वामीजी एकेश्वरवादी थे। केशवचन्द्र सेन, महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर तथा रामकृष्ण परमहंस से उनकी भेंट हुई थी और उन्हीं की तरह स्वामी जी ने हिन्दू समाज में एक क्रांतिकारी आंदोलन आरंभ किया। उन्होंने अंधविश्वास, मूर्तिपूजा, बहुविवाह, बाल विवाह, हिंसात्मक यज्ञों आदि बुरी प्रथाओं तथा सामाजिक कुरीतियों की कट्टुआलोचना की और विधवा विवाह, नारी शिक्षा आदि का जोरदार समर्थ किया।

1874 ई0 में उन्होंने 'सत्यार्थ प्रकाश' नामक एक ग्रन्थ लिखा जिसमें उन्होंने अपने सिद्धांतों की व्याख्या की। 1875 ई0 में उन्होंने काठियाबाड़ में 'आर्य समाज' की स्थापना की और उसी समय से ही आर्यसमाज भारतीय

जन-जागरण में एक प्रमुख भाग लेता आया है। खामी दयानंद सरस्वती के सिद्धांतों की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है।

1. सत्य, विद्या और सबों का मूल परमेश्वर है। ईश्वर सच्चिदानंद, निराकार सर्वशक्तिमान, अनन्त, निर्विकार, सर्वाधिकारी, सर्वेश्वरा, सर्वव्यापक, अमर, नित्य, पवित्र तथा सृष्टिकर्ता है। अतः सबों को उसकी पूजा करनी चाहिए।
2. मनुष्य को सत्य करना चाहिए। असत्य का त्याग करना चाहिए तथा सभी हिन्दुओं को वेदों का अध्ययन करना चाहिए।
3. विश्व कल्याण ही मनुष्य का धर्म है। दूसरों के साथ प्रीतिपूर्वक बर्ताव करना, अविद्या का नाश करना तथा शिक्षा का प्रसार करना उसका कर्तव्य है।

इन मूल सिद्धांतों के आधार पर खामी जी ने आर्य समाज की स्थापना की। आर्य समाज द्वारा चलाये गये आंदोलन का विशेष प्रभाव पंजाब और संयुक्त प्राप्त पर पड़ा। 1883 ई० में खामी दयानंद सरस्वती का देहांत हो गया। उस समय से आर्य समाज ने जाति व्यवस्था की कठोरता तथा छुआछूत का घोर विरोध किया है तथा स्त्रियों की अवस्था में सुधार लाने के लिए बहुत से अनाथालय, विधवाश्रम आदि की स्थापनाएँ की हैं। शुद्धि के सहारे धर्मान्तरित हिन्दुओं तथा अन्य धर्मावलम्बियों को पुनः हिन्दू धर्म में प्रविष्ट कराने का श्रेय आर्य समाज को ही है। आर्य समाज ने शिक्षा के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण कार्य किए हैं। खामी जी पाश्चात्य शिक्षा के विरोधी तथा उपनिषद् युग की गुरुकुल प्रणाली के समर्थक थे। काँगड़ी तथा ज्वालापुर के गुरुकुल कॉलेज तथा डी०ए०वी० कॉलेज खामी जी के आदर्शों पर ही स्थापित किये गये हैं। बड़े-बड़े शहरों में आर्यसमाज की ओर से विद्यालयों की स्थापना की गयी है। नारी शिक्षा के प्रचार में भी आर्य समाज का उल्लेखनीय योगदान रहा है।

आर्य समाज आंदोलन का उत्तर तथा पश्चिमी भारत के लोगों पर व्यापक प्रभाव पड़ा। इसके द्वारा हिन्दू सामाजिक व्यवस्था में भी महत्वपूर्ण सुधार लाये गये। इसने जातिवाद छुआछूत और बालविवाह को समाप्त करने का सबल प्रयास किया। स्त्रियों की दशा में सुधार लाने तथा पिछड़े वर्ग के लोगों को उपर उठाने की दिशा में भी आर्य समाज के कार्य चिरस्मरणीय समझे जाते हैं। इसके द्वारा जनकल्याण के उद्देश्य से अनेक संस्थाओं का निर्माण किया गया। आर्यसमाजियों

ने देश के विभिन्न भागों में अनाथों, विधवाओं तथा भिखरियों के लिए अनेक आश्रम स्थापित किए। उन्होंने अस्पतालों तथा छात्रावासों का भी निर्माण करवाया। आर्यसमाज के द्वारा संचालित ‘शुद्धि आंदोलन’ हिन्दू धर्म के इतिहास में ‘सर्वथा’ नवीन है। इसी प्रकार सर्वप्रथम आर्यसमाजियों ने ही हिन्दू धर्म में एक मिशनरी साहस पैदा की।

1883 ई0 में दयानंद की मृत्यु हो गयी। उनकी मृत्यु के बाद महात्मा हंसराज स्वामी, स्वामी, श्रद्धानंद, लाला लाजपत राय जैसे व्यक्तियों ने आर्यसमाज को न सिर्फ जिन्दा रखा, बल्कि इसे तेजी से भारत के विभिन्न क्षेत्रों में भी फैलाया। दयानंद का बचपन का नाम ‘मूलशंकर’ था। गुजरात राज्य में ‘ठनकारा’ नामक एक छोटे से नगर में एक रुद्रिवादी ब्राह्मण के घर में उनका जन्म हुआ। बचपन में ही इनका मूर्तिपूजा घर से विश्वास उठ गया। 1845 ई0 में वे विवाह होने से पूर्व ही अपना घर छोड़कर भाग गये और 1861 ई0 तक वे एक ब्रह्मचारी साधु के वेश में सम्पूर्ण भारत के विभिन्न उल्लेखनीय एवं महत्वपूर्ण जगहों का भ्रमण करते रहे। 1861 ई0 में उन्होंने मथुरा के ‘स्वामी विरजानंद’ को अपना गुरु और वहीं पर उन्होंने वेदों का अध्ययन किया। अपने गुरु विरजानंद से पृथक होकर उन्होंने धर्म, सभ्यता और भाषा के प्रचार का कार्य आरंभ किया और भाषा के प्रचार का कार्य आरंभ किया और सर्वप्रथम बम्बई में 1875 ई0 में आर्यसमाज की स्थापना की। इसके पश्चात वे भारत के विभिन्न स्थानों पर धूम-धूमकर अपने विचारों का प्रचार करते रहे और स्थान-स्थान पर उन्होंने आर्यसमाजों की स्थापना की। आर्यसमाज ने आरंभ में केवल तीन सिद्धांत रखें:

1. आर्यसमाज केवल वेदों को ही स्वतंत्रता और अंतिम शब्द स्वीकार करेगा।
2. समाज का प्रत्येक सदस्य अपनी आय का सौवां भाग समाज, आर्य-विद्यालय और ‘आर्य-प्रकाश’ समाचार पत्र को देगा तथा
3. आर्यसमाज के विद्यालयों में नवयुवक और नवयुवतियों को सत्य और उचित शिक्षा प्रदान करने के लिए वेदों के आधार पर शिक्षा दी जाएगी।

1877 ई0 में इन तीन सिद्धांतों के स्थान पर आर्य समाज ने निम्नलिखित 10 सिद्धांत निश्चित किये:

1. वेद ही सत्य ज्ञान के खोत हैं। अतः वेदों का अध्ययन आवश्यक है।

2. वेदों के आधार पर मंत्र-पाठ और हवन करना।
3. मूर्तिपूजा का खण्डन।
4. तीर्थयात्रा और अवतारवाद का विरोध।
5. कर्म और पुनर्जन्म अथवा जीव के आवागमन के सिद्धांत में विश्वास।
6. एक ईश्वर में विश्वास जो निराकार हैं।
7. स्त्री शिक्षा में विश्वास।
8. बाल-विवाह और बहु-विवाह का विरोध।
9. कुछ विशेष परिस्थितियों में विधवा-विवाह का समर्थन।
10. हिन्दी और संस्कृत भाषा के प्रसार का प्रयत्न करना।

उपर्युक्त सिद्धांतों के आधार पर आर्यसमाज ने हिन्दू धर्म और समाज के सुधार हेतु महत्वपूर्ण कार्य किये। स्वामी दयानंद ने आर्यसमाज के निर्माण में समानता की जिस भावना को सम्मिलित किया था, वह विभिन्न समाजों के संगठन और उनके प्रचार-कार्य में अत्यधिक सहायता का एक अन्य मुख्य आधार आर्यसमाज की धार्मिक कट्टरता थी। हिन्दू धर्म सिद्धांत और व्यवहारिक दृष्टि से सर्वदा उदार रहा है। ईश्वर की एकता और विचारों की विभिन्नता में स्वयं उसका विश्वास रहा है। स्वयं वेद भी अपनी श्रेष्ठता का दावा नहीं करते। इस कारण हिन्दू धर्म ने ईसाई, इस्लाम, बौद्ध, जैन आदि सभी धर्मों के प्रति सहनशीलता का व्यवहार किया है, लेकिन यही हिन्दू धर्म की सबसे बड़ी दुर्बलता भी रही है। जबकि इस्लाम और ईसाई धर्म क्रमशः ‘कुरानः’ ‘कुरान’ और ‘बाईबिल’ को ही एकमात्र सत्य धार्मिक ग्रंथ और ‘मुहम्मद’ या ‘ईसा मसीह’ को ही क्रमशः ईश्वर का एकमात्र दूत मानते हैं। हिन्दू धर्म सभी मार्गों को उचित मानता है और सभी महान् धार्मिक व्यक्तियों को ईश्वर का दूत स्वीकार करता है। इसी कारण हिन्दू धर्म की उदारता उसकी निर्बलता का कारण बनी और इसी कारण वह कट्टर ईस्लाम और ईसाई धर्म का मुकाबला करने में असमर्थ रहा। स्वामी दयानंद ने इस दुर्बलता को समझा तथा ईस्लाम और ईसाई धर्म की भाँति ही हिन्दू धर्म को कट्टरता प्रदान की। इसी कारण उन्होंने वेदों को सत्य ज्ञान की एक मात्र सहारा बताया। इसके कारण आर्यसमाज हिन्दू धर्म का कट्टर समर्थक बना और ‘सैनिक हिन्दुत्व’ कहलाया।

रखामी दयानंद ने अनेक बार ज्ञान की परवाह किए बगैर इंसानियत को बरकरार रखने के संघर्ष किया। जहर पीकर भी वे इंसानियत की रखवाली करते रहे। उन्होंने वह सब कुछ किया, तो उस वक्त समाज, संस्कृति, सभ्यता, राष्ट्रभाषा, स्त्री, विधवा, दलित स्वदेशी और साहित्य के ही एक युग पुरुष को करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक इतिहास-चोपड़ा, पुरी और दाय।
2. Social, Cultural and Economics History of India-H.C. Roy Chaudhary.
3. Ibid.
4. A Social History of India-R. Kumar
5. Social, Cultural and Economics History of India-H.C. Roy Chaudhary.